पैरवी संवाद

पब्लिक एडवोकेसी इनीशिएटिव्स फ़ॉर राइट्स एण्ड वैल्यूज़ इन इण्डिया

अप्रैल 2018

इस अंक में...

2 **प्रधान मंत्री फसल बीमा योजना; नुकसान किसानों का मुनाफा कंपनियों का**
- चेतना जोशी

6 **बांधों से बंधी नदियां**
- रवीना

9 **स्वच्छ ऊर्जा फण्ड की दुर्दशा**
- अजय झा

11 **घृणा अपराध और भीड़तंत्र की चुनौती; स्वतंत्र कानूनी व्याख्या की जरूरत**
- दीनबंधु वत्स

14 **पैरवी गतिविधियां**

संपादक मंडल

प्रो. संजय भट्ट
अजय के. झा
रजनीश साहिल

संपादकीय

प्रिय साथियो,

हाल ही के दिनों में उत्तर और मध्य भारत के कई हिस्सों में बारिश हुई है। अप्रैल के पहले ही सप्ताह में ही कई हिस्सों में 40 डिग्री तक पहुंच जाने वाले तापमान से भले ही राहत महसूस की जा रही हो लेकिन हजारों चेहरों पर चिंता के बादल भी घुमड़े हैं। यह फसलों की कटाई का समय है। कहीं सूखी फसल खेतों में खड़ी है, तो कहीं कटी हुई फसल खलिहानों में है। ऐसे में बारिश होना किसानों के लिए चिंता की ही बात है। उनके लिए भी जिन्होंने फसल बीमा कराया है। बीते कुछ सालों में फसल की हानि पर किसानों को 10, 20, 50 रुपये का मुआवज़ा मिलना एक बार-बार दोहराई जाने वाली कहानी बन चुका है, जबकि हर साल केंद्र व राज्य सरकारें इसके लिए करोड़ों रुपये आबंटित करती हैं। तो फिर यह पैसा जाता कहां है? इसे समझने के लिए फसल बीमा की प्रक्रिया और उसमें बीमा कंपनियों की भूमिका को जानना जरूरी है, और यह जानकारी स्पष्ट करती है कि इस प्रक्रिया और भूमिका में बदलाव के बिना किसानों के नुकसान की भरपाई कर पाना मुश्किल है।

जहां किसान प्राकृतिक आपदाओं की मार झेल रहे हैं वहीं किसानों के साथ-साथ हम सभी मनुष्य जनित आपदाओं के घेरे में हैं। एक तरफ हम नदियों को जीवनदायिनी कहते हैं और दूसरी तरफ उसी जीवन को बांधने की ओर अग्रसर हैं। बिजली के लिए नदियों को बड़े बांधों में बांधने के गंभीर परिणामों पर विचार न करना एक और बड़ी गलती है। इससे न केवल जमीन का कुछ हिस्सा डूब जाता है बल्कि यह पारिस्थितिकी के लिए भी गंभीर नुकसानदेह है, जिसका खामियाजा निकट भविष्य में हम सबको भुगतना होगा। गौरतलब है कि इन बड़े बांधों के पीछे तर्क है स्वच्छ व नवीकरणीय ऊर्जा का, लेकिन क्या यह वाकई स्वच्छ ऊर्जा है? फिर यह भी विचारणीय है कि स्वच्छ ऊर्जा के लिए हमारी सरकार कितने ठोस कदम उठा रही है और इसी के लिए बने स्वच्छ ऊर्जा फण्ड की क्या स्थिति है?

यह कहा जाए कि हम अपनी प्रकृति के साथ तो बदसुलूकी कर ही रहे हैं लेकिन अपने सामाजिक ताने-बाने के साथ उससे भी बुरा बर्ताव कर रहे हैं तो यह अतिश्योक्ति न होगी। इसका उदाहरण है पूरी दुनिया में बेतहाशा बढ़ रही घृणा अपराधों की संख्या, जिसमें भारत की स्थिति चिंताजनक है। बीते कुछ सालों में भारत में जाति, धर्म आधारित घृणा अपराध की घटनाओं में तेजी से वृद्धि हुई है, लेकिन हमारे पास इससे निपटने के लिए कोई विशिष्ट कानूनी व्यवस्था नजर नहीं आती। नतीजतन घृणा जंगल की आग की तरह फैलकर अन्य अपराधों की जमीन तैयार करती नजर आती है। ऐसे में मौजूदा कानूनों से इस समस्या पर कैसे नियंत्रण पाया जा सकता है, यह एक बड़ा प्रश्न है।

पैरवी संवाद के इस अंक में हमने इन्हीं सब बिंदुओं पर अपनी बात रखने का प्रयास किया है। आशा है आप अपने विचारों से हमें अवगत कराएंगे।

धन्यवाद।

– संपादक मण्डल

प्रधान मंत्री फसल बीमा योजना;
नुकसान किसानों का, मुनाफा कंपनियों का

✍ *चेतना जोशी*

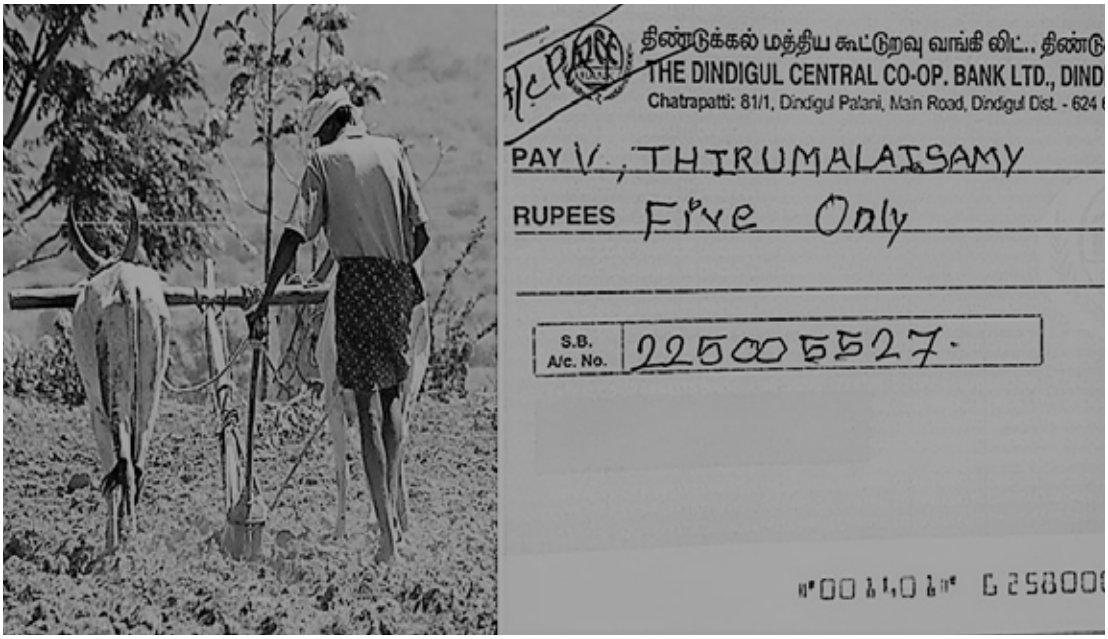

चित्र क्रेडिट: द हिंदू

देश में फसल बीमा योजनाओं को आए चार दशक पूरे हो चुके हैं। जहां शुरुआती योजनाएं प्रयोग के तौर पर लागू की गई थीं वहीं वृहद स्तर पर लागू की गई कृषि बीमा योजनाओं ने भी देश में दो दशक पूरे कर लिए हैं। 2016 के आंकड़ों के अनुसार अब तक देश भर की कुल 140 मिलियन हैक्टेयर कृषि योग्य भूमि में से केवल 24 प्रतिशत का ही कृषि बीमा हो पाया है। करीब 26 प्रतिशत किसानों को ही बीमा के अंदर लाया जा सका है। कृषि बीमा योजनाएं अपेक्षा के अनुरूप किसानों में पैठ नहीं बना पाई हैं।

इस समय देश में फसल बीमा से संबन्धित तीन योजनाओं - प्रधान मंत्री फसल बीमा योजना, पुनर्गठित मौसम आधारित फसल बीमा योजना और नारियल पाम बीमा योजना का क्रियान्वयन चल रहा है। प्रधान मंत्री फसल बीमा योजना एक बहुचर्चित और महत्वाकांक्षी योजना है जो कि अप्रैल 2016 में लागू की गई। इस नयी बीमा योजना ने पुरानी राष्ट्रीय कृषि बीमा योजना और संशोधित राष्ट्रीय कृषि बीमा योजना की जगह ली। अधिक से अधिक किसानों को कृषि बीमा का लाभ पहुंचाने के मकसद से लायी गई इस योजना की खास बात इसमें किसानों पर पड़ने वाले प्रीमियम का कम और एक समान होना है। प्रधान मंत्री फसल बीमा योजना और पुनर्गठित मौसम आधारित फसल बीमा योजना के दायरे में सभी फसलें, जैसे कि अनाज, दलहन, तिलहन, बाजरा, बागवानी की एवं व्यावसायिक फसलें आती हैं। खरीफ की फसलों के लिए प्रीमियम कुल प्रीमियम का दो प्रतिशत, जबकि रबी की फसल के लिए 1.5 प्रतिशत रखा गया है। बागवानी वाली और व्यावसायिक फसलों के लिए बीमा का प्रीमियम पांच प्रतिशत रखा गया है। पिछले सालों में हुए उत्पादन के आकड़ों की उपलब्धता और राज्य सरकार के क्रॉप कटिंग प्रयोग कराने की क्षमता के आधार पर यह राज्य सरकार को निर्धारित करना होता है कि कौन-कौन सी फसलें वे इस बीमा योजना के दायरे में लाना चाहते हैं।

केंद्र सरकार ने अपनी इस किसानों को सुरक्षा प्रदान करने वाली मुख्य योजना के क्रियान्वयन हेतु वित्तीय वर्ष 2016- 2017 में इस योजना के लिए 5500 करोड़ का प्रावधान किया। अगले

वित्तीय वर्ष 2017-18 में इस योजना के अंदर 40 प्रतिशत कृषि भूमि को ले आने का लक्ष्य रखा गया और उसी हिसाब से 2017-18 के बजट में इस योजना के लिए 9000 करोड़ से भी कुछ ज्यादा का प्रावधान किया गया। हालांकि बाद में 1701 करोड़ के अतिरिक्त आवंटन ने 2017-18 के लिए कुल आवंटन को 10,701 करोड़ तक पहुंचा दिया। इस वर्ष फरवरी में आए 2018-19 के बजट में योजना के लिए कुल प्रावधान 13,000 करोड़ का किया गया है और 50 प्रतिशत खेती के इलाके को इसके अंदर लाने का लक्ष्य रखा गया है। इसके अब तक के क्रियान्वयन के आधार पर कहा जा सकता है कि इस नयी बीमा योजना से भी किसानों को राहत नहीं मिली है, बल्कि इसकी कमियां ही ज्यादा सामने आई हैं।

सभी किसानों तक पहुंचने की चुनौती

राष्ट्रीय प्रतिदर्श सर्वेक्षण कार्यालय (एनएसएसओ) के आंकड़ों के अनुसार हिन्दुस्तान के 52 प्रतिशत से भी ज्यादा किसान कर्ज में डूबे हैं। इनमें वे किसान भी हैं जिन्होंने बैंकों से कर्ज लिया हुआ है और वे भी जो साहूकारों के कर्जदार हैं। बैंक से कर्ज लेने वाले किसानों के लिए फसल बीमा लेना अनिवार्य है। पर साहूकारों से कर्ज लेने वाले किसानों तक इसकी पहुंच नहीं बन पाई है। प्रधान मंत्री फसल बीमा योजना के सफल क्रियान्वयन की मुख्य चुनौती उन किसानों को इसमें शामिल करने की है जिन्होंने बैंकों से कर्ज नहीं लिया है। इसके अतिरिक्त दूसरों की जमीन पर खेती करने वाले और बटाईदार या साझेदारी में खेती करने वाले किसानों को इसका लाभ मिले बगैर ये एक अधूरी और सीमित योजना ही बन कर रह जाएगी।

फसल बीमा योजना से किसानों को राहत नहीं और कंपनियों को मुनाफा ही मुनाफा

आंकड़े बताते हैं कि किसानों के लिए लाई गई इस बीमा योजना में किसान प्रमुख लाभार्थी नहीं हैं। यह योजना बैंकों की मार्फत चल रही है। बीमा भी बैंक से लेना होता है और फसल खराब होने की स्थिति में किसानों को बैंक से ही बीमा की राशि दी जाती है। फसल खराब होने पर किसानों तक पहुंचने वाली राशि बीमाकृत राशि से अमूमन काफी कम निकलती है। ऐसा इसलिए होता है क्योंकि बैंक किसान की फसल बीमा की रकम से उनके द्वारा लिए गए ऋण की राशि काटकर बची हुई राशि किसानों को अदा करते हैं। यह बैंकों के लिए राहत की बात है क्योंकि किसानों को दिया गया उधार उनसे वापस लेने की जद्दोजहद में पड़े बिना ही इस बीमा योजना से उनका पैसा वापस उनके पास आ जाता है। पूरे देश से ही ऐसी खबरें आई हैं कि किसानों को बीमा भुगतान के नाम पर 5, 10, 20, 50 रुपये के चेक मिले। उदाहरण के लिए हिन्दुस्तान टाइम्स में 19 सितंबर 2017 को छपी खबर के अनुसार, मध्य प्रदेश के सीहोर जिले के तिलड़िया गांव के किसान धनपाल सिंह को बीमा राशि के रूप में 49.96 रुपये का चेक दिया गया जबकि उन्होंने 1342.70 रुपये प्रीमियम राशि जमा करा कर अपनी 2.3 हैक्टेयर जमीन का 67,135 रुपये का बीमा लिया था। ऐसी ही खबरें अमूमन देश के सभी हिस्सों से आईं।

2016 खरीफ के आंकड़ों के हिसाब से सबसे ज्यादा फायदा बीमा कंपनियों का रहा जिन्होंने खरीफ 2016 के बीमा के केवल 32 प्रतिशत दावों का ही भुगतान किया वो भी अप्रैल 2017 तक। उन 21 राज्यों में जहां ये योजना लागू की गई, 14 राज्यों में या तो भुगतान हुआ ही नहीं या फिर अधूरा ही हुआ। इन सबके बीच बीमा कंपनियां खरीफ 2016 के कृषि बीमा से ही करीब 10,000 करोड़ का मुनाफा कमा गईं।

प्रधानमंत्री फसल बीमा योजना बीमा कंपनियों की एक योजना की तरह नहीं बल्कि बैंक की एक योजना की तरह आई है। बैंक से किसानों को बीमा योजना लेने पर कोई पुख्ता लिखित प्रमाण या पर्ची इत्यादि भी नहीं दी जाती है। बीमा कम्पनियां किसानों की जोत का या फसल का कोई डेटाबेस भी नहीं रखतीं हैं। किसानों की सबसे करीबी पहुंच पंचायत संस्थानों तक होती है पर उनकी भी फसल बीमा योजना में कोई भूमिका नहीं है। इस बीमा योजना में ऐसा कोई प्लेटफार्म भी नहीं है जहां किसान बीमा कंपनियों से सीधे संपर्क बना सकें। किसानों के मुद्दों को रखने की कोई जगह नहीं होने की वजह से किसान इसे बैंक और बीमा कंपनियों के फायदे की ही योजना मान रहे हैं जिससे इस महत्वपूर्ण योजना का किसानों के बीच पैठ बनाना मुश्किल ही हुआ है। इस स्थिति में जरूरी यह है कि इसे बैंक की मार्फत लागू योजना से हटाकर पूरी तरह बीमा कंपनियों की योजना बनाया जाए।

राज्य सरकारें प्रीमियम देने में असमर्थ

राष्ट्रीय कृषि बीमा योजना और संशोधित राष्ट्रीय कृषि बीमा योजना के स्थान पर लाई गई प्रधानमंत्री कृषि बीमा योजना में एक बड़ा अंतर यह भी है कि जहां पुरानी योजनाओं में राज्य सरकारें भुगतान की राशि में सब्सिडी देती रही हैं, वहीं इस नयी बीमा योजना के तहत किसान जहां बीमाकृत राशि का दो प्रतिशत (खरीफ) की दर से प्रीमियम

जमा करता है वहीं प्रीमियम की शेष रकम राज्य व केंद्र सरकारें आधा-आधा जमा कराती हैं। राज्य सरकारें जो पहले से ही वित्तीय संकट से जूझ रही हैं, उनके लिए भारी भरकम प्रीमियम एक अतिरिक्त बोझ की तरह आया है। उदाहरण के लिए राजस्थान सरकार के 2016 के आंकड़ों के मुताबिक, प्रधानमंत्री फसल बीमा योजना के राज्य में क्रियान्वयन के लिए राज्य सरकार को 1109 करोड़ रुपये प्रीमियम की सब्सिडी के तौर पर जमा करने थे। जबकि एग्रीकल्चर इंश्योरेंस कंपनी ऑफ इंडिया लिमिटेड, जो कि इस बीमा योजना के क्रियान्वयन में लगी सार्वजनिक क्षेत्र की अकेली कंपनी है, के मुताबिक ये रकम 1800 करोड़ थी। इन दोनों अनुमानों से अलग राजस्थान राज्य सरकार ने इस योजना के लिए केवल 676 करोड़ का ही प्रावधान रखा। बिहार और मध्य प्रदेश सरकारों का योजना के लिए अपेक्षित सहयोग भी चौंकाने वाला था। 2016 के ही आंकड़ों के मुताबिक जहां बिहार राज्य सरकार को इस बीमा योजना के क्रियान्वयन के लिए 650 करोड़ का योगदान करना था (जो कि राज्य के कृषि बजट का एक चौथाई था), वहीं मध्य प्रदेश राज्य सरकार से अपेक्षित प्रीमियम उसके कृषि बजट का 60 प्रतिशत था।

इतने भारी भरकम भुगतान से बचने के लिए कई राज्य सरकारों ने अलग-अलग हथकंडों का सहारा लिया। जहां कुछ राज्य सरकारों ने खरीफ 2016 के लिए अधिसूचना ही देर से निकाली वहीं कुछ ने सब्सिडी की रकम जमा कराने में देरी की। कुछ राज्य सरकारों ने क्रॉप कटिंग प्रयोग से मिलने वाले उत्पादन के नतीजे जमा करने में भी देरी की। प्रधानमंत्री के नाम के साथ आई योजना के सफल होने पर राज्य सरकारों को इसका श्रेय नहीं मिलेगा इसलिए प्रीमियम का आधा भाग देने और क्रॉप कटिंग प्रयोग कराने के लिए जिम्मेवार राज्य सरकारों को इस योजना की सफलता से कम ही सरोकार हो सकता है। क्रियान्वयन की इस चुनौती से नुकसान केवल किसान का ही हुआ है। केंद्र सरकार जो कि किसानों को मिलने वाली खाद सब्सिडी जैसी योजना का 100 प्रतिशत अकेले ही वहन करती है उसे बेहद महत्वपूर्ण इस बीमा योजना के सफल क्रियान्वयन के लिए इसे पूरी तरह केंद्रीय योजना बनाना चाहिए, जिससे इस योजना के साथ जुड़ा 'प्रधानमंत्री' शब्द भी सार्थक हो सके।

फसल बर्बादी का आकलन समस्याजनक

पुरानी और इस नयी बीमा व्यवस्था से किसानों को फायदा न मिल पाने के पीछे एक कारण इनका फसल की बर्बादी तय करने का तरीका भी है। इस तरीके में किसानों की व्यक्तिगत फसल और व्यक्तिगत हानि का आकलन नहीं किया जाता बल्कि एक बड़ी इकाई जैसे कि गांव या पंचायत भर की पैदावार के आधार पर मुआवजा तय करता है। फसल बरबादी की स्थिति में पिछले 7-10 वर्ष के गांव/पंचायत के औसत उत्पादन से फसल बरबादी वाले वर्ष में औसत उत्पादन को घटाकर औसत बरबादी का आकलन किया जाता है जिसके आधार पर बीमा की राशि दी जाती है। इस गणना में इस बात का खयाल रखने की जगह नहीं है कि एक ही गांव के अंदर कुछ किसान ऐसे भी हो सकते हैं जिनकी पूरी की पूरी फसल ही खराब हो गई हो। औसत गणना के हिसाब से बीमाकृत राशि मिल जाने पर भी ऐसे किसानों को भारी नुकसान उठाना पड़ता है। आज जबकि उत्पादन का आकलन करने के लिए रिमोट सेंसिंग/ सेटेलाइट चित्र, ड्रोन आदि तकनीकें मौजूद हैं, जीपीएस युक्त हाथ में ले कर चल सकने वाले उपकरण और मोबाइल/स्मार्ट फोन मौजूद हैं जिससे चित्रों को बिना किसी देरी के एक जगह से दूसरी जगह भेजा जा सकता है, तो हर एक किसान को उसकी फसल की व्यक्तिगत हानि के हिसाब से बीमा का भुगतान होना चाहिए, अन्यथा प्रीमियम जमा करने वाले किसान अंत में अपने को ठगा ही महसूस करते रहेंगे।

राज्य सरकारों की क्रॉप कटिंग प्रयोग करवा पाने में अक्षमता और किसानों को भुगतान में देरी

गांव या पंचायत स्तर पर औसत उत्पादन निकालने के लिए किये जाने वाले क्रॉप कटिंग प्रयोग भी इसके क्रियान्वयन में बाधा हैं। देश भर में गांव और पंचायत के स्तर पर वास्तविक वर्तमान उत्पादन निर्धारित करने के लिए 40 लाख से भी ज्यादा ऐसे प्रयोग करने की जरूरत पड़ती है। इन प्रयोगों को एक निश्चित समय-सीमा के अंदर करने के लिए करीब इतने ही कुशल लोगों की जरूरत पड़ती है। राज्य सरकारों के पास ऐसे कार्यकुशल और पर्याप्त लोगों की कमी है। हालांकि नयी बीमा योजना के तहत रिमोट सेन्सिंग, मोबाइल तकनीक के इस्तेमाल से क्रॉप कटिंग प्रयोगों में जियो टेगिंग के लिए प्रावधान किया गया है पर इसका व्यापक इस्तेमाल वर्तमान नहीं बल्कि आने वाले समय की बात है।

किसानों के हितों की सुरक्षा और तय समय-सीमा के भीतर भुगतान प्रधानमंत्री फसल बीमा योजना को सफल बनाने के लिए बेहद जरूरी है। 23 नवंबर 2017 की द ट्रिब्यून में छपी खबर के मुताबिक हरियाणा राज्य के 1300 किसानों को खरीफ 2016 के फसल के नुकसान के एक साल बाद

तक भी बीमा राशि नहीं मिल पाई है। ये रकम तीन करोड़ के आस-पास की बताया गई है। इसके लिए बैंक और बीमा कंपनियों के बीच किसानों के बीमा किए हुए खेतों के क्षेत्रफल को लेकर लिखा-पढ़ी में हुई गलतियां जिम्मेवार थीं।

अंत में

प्रधानमंत्री कृषि बीमा योजना का सुचारू क्रियान्वयन एक समस्या बन जाता है जबकि इसके क्रियान्वयन में लगी 11 कंपनियों में से केवल एक सार्वजनिक क्षेत्र की है। अन्य सार्वजनिक क्षेत्र की कंपनियों को दरकिनार कर जिन निजी बीमा कंपनियों को बीमा योजना के क्रियान्वयन में लगाया गया है उनके पास न तो ग्रामीण भारत में आधारभूत संरचना है और ना ही मानव संसाधन। योजना के परिमाण के हिसाब से अपने संसाधनों को न बढ़ाना उनकी योजना के उद्देश्य को पूरा करने को लेकर प्रतिबद्धता में कमी दर्शाता है। इस फसल बीमा योजना को पहले आई हुई योजनाओं की तरह असफल होने से बचाने के लिए जरूरी है कि सरकार सार्वजनिक क्षेत्र की बीमा कंपनियों को इसके क्रियान्वयन में लगाने के साथ-साथ बीमा कंपनियों की मुनाफाखोरी कम करने और दावों का शीघ्र निपटान करने के लिए रेग्युलेटर की व्यवस्था सुनिश्चित करे। केंद्र सरकार इसे केन्द्रीय योजना की तरह लागू करे जिससे राज्यों की तरफ से होने वाली देरी और अनिश्चितता को टाला जा सके। किसानों की फसल के मूल्य का सही आकलन और हर एक किसान की व्यक्तिगत फसल बर्बादी के आधार पर समय पर क्षतिपूर्ति सुनिश्चित करके ही इसे किसानों के बीच उनके हित की योजना के तौर पर लाया जा सकता है। ■

ख़बर

नोबेल विजेताओं और मानवाधिकार कार्यकर्ताओं ने सीरिया, यमन के लिए गंभीर प्रयास का आह्वान किया

डेड सी (जॉर्डन)। 26 मार्च 2018

दुनिया के प्रमुख मानवाधिकार कार्यकर्ताओं और नोबेल विजेताओं ने सीरिया और यमन के युद्ध में बड़े पैमाने पर बच्चों के पीड़ा झेलने पर चिंता प्रकट की और अंतरराष्ट्रीय समुदाय का आह्वान किया कि इन दोनों देशों में संघर्ष खत्म करने के लिए और गंभीरता से प्रयास किये जाएं। उन्होंने यह भी आरोप लगाया कि इन देशों में हिंसक संघर्षों को रोकने में अब तक अंतरराष्ट्रीय समुदाय नाकाम रहा है।

यहां किंग हुसैन बिन तलाल कन्वेंशन सेंटर में दूसरी 'लॉरेट्स एंड लीडर्स फॉर चिल्ड्रन' शिखर बैठक की शुरुआत के मौके पर अल्जीरिया के पूर्व विदेश मंत्री और मानवाधिकार कार्यकर्ता लखदर ब्राहिमी ने कहा कि सीरिया और यमन में संघर्ष को खत्म करने में अंतरराष्ट्रीय समुदाय ने निराश किया है। उन्होंने कहा, 'अंतरराष्ट्रीय समुदाय नाकाम रहा है। यही वजह है कि इतनी बड़ी संख्या में लोग खासकर बच्चे ये पीड़ा झेल रहे हैं। यह संघर्ष खत्म होना चाहिए। अंतरराष्ट्रीय समुदाय को इसके लिए और गम्भीरता दिखानी होगी तथा ठोस प्रयास करने होंगे।' गौरतलब है कि ब्राहिमी सीरिया को लेकर संयुक्त राष्ट्र और अरब लीग के संयुक्त विशेष प्रतिनिधि रह चुके हैं।

नोबेल शांति पुरस्कार विजेता (2011) तवक्कल कारमान ने कहा, 'दुनिया के सामने यह बहुत बड़ा संकट है। ये शरणार्थी यहां क्यों हैं? इन बच्चों का क्या कसूर है? जो इस हालत के जिम्मेदार अपराधी हैं वो आजाद हैं, लेकिन ये बच्चे सबसे बड़े मानवीय संकट का सामना कर रहे हैं।' उन्होंने सीरिया के हालात का हवाला देते हुए कहा, 'अंतरराष्ट्रीय न्याय कहां है? सरकार और सेना लोगों पर जुल्म कर रही है और कुछ नहीं हो रहा। मैं इस मंच से यह भी कहना चाहती हूं कि अंतरराष्ट्रीय समुदाय को सतत् विकास के लक्ष्यों को पूरा करने में बच्चों पर विशेष ध्यान देना चाहिए ताकि बाल अधिकार की रक्षा हो सके।'

नोबेल विजेता कैलाश सत्यार्थी ने अपने उद्घाटन सम्बोधन में कहा, 'मैं एक ऐसे विश्व का सपना देखता हूँ जहां किसी बच्चे को पासपोर्ट या वीजा की जरूरत नहीं पड़े। अगर प्रौद्योगिकी, ज्ञान और दौलत का आदान-प्रदान सीमाओं के दोनों तरफ निर्बाध रूप से हो सकता है तो फिर बच्चे आजादी से क्यों आ-जा नहीं सकते?' सत्यार्थी ने कहा, 'हर जिंदगी महत्वपूर्ण है। हम सभी को इस बचपन को सुरक्षित करना होगा। बच्चे सुरक्षित हैं तो पूरी मानवता सुरक्षित है।' जॉर्डन के शाही परिवार के सदस्य प्रिंस अली बिन अल हुसैन ने कहा, 'हमें बच्चों का सुरक्षित भविष्य सुनिश्चित करना है। हम जो भी कदम उठाएं उसमें मानवीय मूल्य समाहित होने चाहिए। सभी को यह सोचना होगा कि हम किस तरह बदलाव ला सकते हैं।' उन्होंने सार्वभौमिक शिक्षा की जरूरत पर जोर देते हुए कहा, 'शिक्षा महंगी है लेकिन कभी भी हथियारों के बराबर महंगी नहीं हो सकती। इसलिए हमें हथियारों को नहीं बल्कि शिक्षा को तवज्जो देनी है।' पनामा की प्रथम महिला लोरेना कासतिलो दी वरेला ने कहा, 'पूरी दुनिया को यह समझने की जरूरत है कि हम सभी एक हैं। अगर किसी दूसरे इंसान को आपकी जरूरत है तो उसका साथ देना चाहिए। यही भावना शरणार्थियों की मदद कर सकती है और उनकी तकलीफों को कम कर सकती है।'

आयरलैंड की पूर्व राष्ट्रपति और 'मेरी रॉबिन्सन फाउंडेशन' की अध्यक्ष मेरी रॉबिन्सन ने कहा कि हमारी पहचान इस बात से होती है कि हम अपने सबसे कमजोर का ख्याल कैसे रखते हैं। आज के दौर में सामाजिक ताने-बाने को खतरा है और इस खतरे में बच्चे सबसे ज्यादा शिकार हैं। बच्चों को अधिक संरक्षण की जरूरत है। इसमें सभी लोगों को एकजुट होना होगा।' अमेरिकी मानवाधिकार कार्यकर्ता केरी केनेडी ने कहा, 'दुनिया में पांच करोड़ बच्चे मुश्किलों का सामना कर रहे हैं। इनको तत्काल मदद की जरूरत है। सहायता करने वाले देशों ने हाल के समय में बहुत ज्यादा दान नहीं दिया। इसे बढ़ाने की जरूरत है। अमीर देशों को और बड़ी भूमिका निभानी होगी।'

स्रोत: http://zeenews.india.com/hindi/world/nobel-laureates-and-human-rights-activists-call-for-serious-efforts-for-syria-yemen/383792

बांधों से बंधी नदियां

रवीना

चित्र स्रोत: हिंदुस्तान टाइम्स

मानव सभ्यता का विकास नदियों के किनारे हुआ और इस सभ्यता को बनाए रखने के लिए हम नदियों पर हमेशा निर्भर रहेंगे जिसके लिए जरूरी है की हमारी नदियों को बांधो से मुक्त बहने दिया जाए। एक ओर जहां फ्रांस और अमेरिका जैसे विकसित देश मान चुके हैं कि बांध नदियों और पारिस्थितिकी के लिए बड़ा खतरा हैं और वे इन बांधों से अपनी नदियों को मुक्त करने का काम शुरू कर चुके हैं वहीं भारत नदियों को बांधने के लिए तेजी से आगे बढ़ रहा है। 2018 में फ्रांस में सेलून नदी पर बने बांधों को हटा कर नदी को पुनर्जीवित किया जाएगा। नेशनल रजिस्टर फॉर लार्ज डैम्स के मुताबिक 2017 में भारत में 5254 बांध हैं और बांध संख्या में भारत विश्व में तीसरे स्थान पर है।

भारत में बाढ़ नियंत्रण के लिए बांध बनाने का काम बहुत समय से चला आ रहा है। धीरे-धीरे इसे विकास का एक महत्वपूर्ण माध्यम माना जाने लगा। बाढ़ नियंत्रण, सिंचाई, जलापूर्ति व जलविद्युत वो मुख्य उद्देश्य हैं जो बांध निर्माण को सरकार की नीतियों में प्राथमिकता पर रखते हैं। 1950 में भारत में कुल बिजली उतपादन का 49.33 प्रतिशत जलविद्युत से होता था जो कि 2017 में घटकर 9.9 प्रतिशत ही रह गया। इसका मुख्य कारण कोयला और दूसरे बिजली उत्पादन स्रोत हैं। हालांकि बांधों का उपयोग कुल बिजली उत्पादन में कम हो गया, लेकिन पैरिस समझौते में जताई गई प्रतिबद्धता के अनुसार स्वेच्छा से कार्बन उत्सर्जन में कटौती के अपने लक्ष्य को पूरा करने के लिए भारत जलविद्युत को आगे बढ़ा रहा है और 25 मेगावाट से ऊपर जलविद्युत संयंत्रों को नवीकरणीय ऊर्जा में शामिल करने पर अमल कर रहा है। 2022 तक नवीकरणीय ऊर्जा की 175 गीगावाट स्थापित क्षमता के लक्ष्य में पांच गीगावाट के छोटे जलविद्युत संयत्रों का लक्ष्य भी शामिल है।

अक्सर बड़ी परियोजनाओं के परिणामस्वरुप समाज के वंचित वर्ग को अप्रत्याशित परिस्थितियों का सामना करना पड़ता है। बांध निर्माण हमारे देश में विस्थापन का सबसे बड़ा कारण है। इन परियोजनाओं के समाज व पर्यावरण पर विभिन्न प्रभाव होते हैं। परियोजना प्रभावित परिवारों का सरकारी आंकड़ा हमेशा गलत साबित हुआ है और अनेक प्रभावित परिवार इन आंकड़ों से बाहर हैं। नर्मदा बचाओ आंदोलन भी हमारे सामने पुनर्वास की चुनौतियों को लगातार पेश करता आ रहा है। हीराकुड व टिहरी जैसे पुराने बांधो से विस्थापित

लोगों को अब तक भी पुनर्वास के समय किए गए वायदे के अनुसार मुआवजे नहीं मिले। बात अगर देश के विकास की हो और उसके लिए कुछ समुदायों को इसकी कीमत चुकानी पड़े तो हम उस विकास को किस हद्द तक उचित ठहरा सकते हैं?

नीचे दी गई टेबल में कुछ बड़े बांधों से हुए विस्थापन व कृषि क्षेत्र डूब के आंकड़े हैं -

बांध	नदी / प्रदेश	बांध प्रभावित गांव/विस्थापित लोगों की संख्या	बांध से डूबा कृषि क्षेत्र
भाकड़ा बांध	सतलुज / हिमाचल प्रदेश	371 गांव (36000 लोग)	10,000 एकड़
टिहरी बांध	भागीरथी / उत्तराखंड	125 गांव (85000 लोग)	
हीराकुंड बांध	महानदी / ओडिशा	249 गांव (1,50,000 लोग)	112,038.59 एकड़
सरदार सरोवर बांध	नर्मदा / गुजरात	245 गांव	11,279 हैक्टेयर
श्रीशैलम बांध	कृष्णा / आंध्रा प्रदेश	27,871 परिवार	106,925 एकड़

ऊपर दिया गया डाटा अलग अलग जगहों से लिया गया है। हर जगह आंकड़ों में मेल न होने से ये अनुमानित डाटा ही है।

बांध निर्माण से जुडी कुछ बड़ी समस्याएं

बड़े पैमाने पर विस्थापन

भारत सरकार के पास बांध विस्थापितों के सही अनुमान नहीं हैं। 1947 से अब तक बांध निर्माण से 44 लाख से ज्यादा लोगों का विस्थापन हो चुका है। विस्थापितों में आदिवासी, अनुसूचित जाति और अनुसूचित जनजाति की बड़ी संख्या है, जिनमें से अधिकतर लोग भूमिहीन हैं। पुनर्वास के नाम पर दिया जाने वाला मुआवजा या जमीन उनके नुकसान की भरपाई नहीं कर पाता। सरदार सरोवर बांध से 192 गांवों का विस्थापन हो चुका है और अनुमान लगाया जा रहा है कि महाकाली नदी पर बनने वाले पंचेश्वर बांध से भारत के करीब 134 गांव और नेपाल के 103 गांव प्रभावित होंगे।

कृषि भूमि की डूब

अपने घर से बेघर होने के पश्चात् विस्थापितों को बहुत गरीबी का सामना करना पड़ता है। बड़े पैमाने पर वन व उपजाऊ कृषि भूमि बांध जलाशय की चपेट में आ जाती है। विस्थापित लोगों को पुनर्वास के रूप में जो जमीन दी जाती है वो अक्सर या तो अनुपजाऊ होती है या वहां सिंचाई और दूसरी सुविधाओं का अभाव होता है। आजीविका के खत्म होने से छोटे किसानों को गरीबी और असहायता का सामना करने पर मजबूर किया जाता है। मध्य प्रदेश के बरगी बांध से 26,797 हेक्टेयर जमीन डूब गई थी जिसमें से 8,478 हेक्टेयर जमीन वन भूमि थी।

जैव विविधता को नुकसान

वनों के डूबने से आसपास के क्षेत्रों की जैव विवधता नष्ट हो जाती है। बांध व जलविद्युत परियोजनाओं से होने वाले प्रभावों का सही आकलन नहीं किया जाता। बांध के कारण जलीय प्रजातियों के आवागमन में बाधा उत्पन्न होती है या वे जलविद्युत के टरबाइन में फंस जाते हैं। इन परियोजनाओं के कारण नदियों में रहने वाली अनेक स्थानीय व प्रवासी मछली प्रजातियां विलुप्त हो रही हैं।

मछुआरों की आजीविका को नुकसान

जैव विवधता और मछली प्रजातियों के नुकसान का सीधा असर उन पर निर्भर समुदायों को होता है। बांध के अनुप्रवाह क्षेत्र में रहने वाले मछुआरों की आजीविका संकट में पड़ जाती है क्योंकि बांध की वजह से अक्सर अनुप्रवाह क्षेत्र में कम पानी जाता है और उस क्षेत्र में मछलियों की संख्या कम हो जाती है।

मिथेन गैस उत्सर्जन

जलविद्युत को सरकार इस तर्क पर बढ़ावा देती है कि यह एक स्वच्छ ऊर्जा स्रोत है जबकि डूबे हुए जंगलों और कृषि जमीनों से मिथेन गैस उत्सर्जन होता है। इन क्षेत्रों के डूबने से अवायवीय स्थिति उत्पन्न होती है और ऑक्सीजन के अभाव में होने वाले वनस्पति और जीव अपघटन से मिथेन गैस का उत्सर्जन होता है। इंटरनेशनल रिवर्स नेटवर्क द्वारा प्रकाशित 'वार्मिंग द अर्थ' के अनुसार कुछ वैज्ञानिकों का मानना है कि विश्वभर के जलाशयों से करीब 700 लाख टन मिथेन गैस का उत्सर्जन होता है जो कि मानव गतिविधियों से होने वाले कुल मिथेन उत्सर्जन के पांचवे हिस्से के बराबर है। मिथेन गैस ग्लोबल वार्मिंग का एक मुख्य कारण है जिससे वैश्विक वार्षिक तापमान में वृद्धि हो रही है।

नदी डेल्टा का सिकुड़ना

नदियां अपने साथ गाद (सेडीमेंट) बहा कर लाती हैं और उन्हें दूसरी जगहों पर जमा कर देती हैं जिससे नदी डेल्टा बनते हैं। यह भूमि बहुत उपजाऊ होती है और साथ-साथ जैव विविधता में समृद्ध होती है। बांध गाद को ऊर्ध्वप्रवाह में (बांध के पीछे) ही रोक देता है जिससे डेल्टा बनने की प्रक्रिया में रुकावट पैदा होती है और वैज्ञानिकों का मानना है कि बांधों के कारण डेल्टा सिकुड़ रहे हैं। बड़े जलाशय 80 प्रतिशत तक गाद को ऊर्ध्वप्रवाह (अपस्ट्रीम) में रोक देते हैं।

इन परियोजनाओं का बहुत बड़ा असर नदियों के पानी की गुणवत्ता पर भी होता है। बांध के पीछे जमा हुए गाद में बड़ी मात्रा में भारी धातु मौजूद होते हैं जो इस पानी को सिंचाई व अन्य उपयोग के लिए अनुपयुक्त बनाते हैं। एक अध्ययन 'इम्पैक्ट्स ऑफ डैम्स एंड ग्लोबल वार्मिंग ऑन फिश बायोडायवर्सिटी इन द इंडो-बरमा हॉटस्पॉट' के अनुसार बांध बनने से जगह-जगह नदी का विभाजन होने के कारण मछलियों के आवागमन में रुकावट पैदा हो रही है और इससे उनकी जलवायु परिवर्तन अनुकूलन क्षमता प्रभावित हो रही है। ग्लोबल वार्मिंग की वजह से तापमान में हुई वृद्धि का असर मछलियों के प्रजनन पर पड़ता है और वे इसी कारणवश नदी के कम तापमान वाले हिस्से में प्रवास करती हैं, लेकिन बांधों की वजह से खंडित नदियों का उनके इस प्रवास पर प्रतिकूल असर पड़ रहा है और अनेक मछली प्रजातियों की संख्या घट रही है।

बांधों से होने वाली समस्यायों का आकलन बांध निर्माण कार्य से पहले पर्यावरण प्रभाव आकलन व सामाजिक प्रभाव आकलन के अंतर्गत होना चाहिए। इन परियोजनाओं में इन आकलनों के लिए बांध बनाने वाली कंपनी ही किसी को नियुक्त करती है जो कि इन आकलनों का पक्षपाती होना दर्शाता है। ऐसी कितनी परियोजनाएं हैं जिनके लिए जन सुनवाई भी नहीं आयोजित होती और उन्हें वन व पर्यावरण मंजूरी दे दी जाती है।

यह सारी समस्याएं ध्यान में रखते हुए हमे यह विचार करना होगा कि क्या हमे बांधों की जरूरत है? बिजली आपूर्ति के लिए हमे जलविद्युत को छोड़ सौर और पवन ऊर्जा जैसे कम पर्यावरण व सामाजिक प्रभाव वाले विकल्पों की तरफ बढ़ना होगा। सिंचाई के लिए भी हमे वर्षा जल संग्रहण को बढ़ावा देना होगा। नदियों की पारिस्थितिकी को बनाए रखने के लिए जरूरी है कि उनके प्रवाह को बांध से न बांधा जाए। बांध हटाने की वित्तीय लागत से ज्यादा महत्त्वपूर्ण है पारिस्थितिक सुधार। हमे तथाकथित विकास समर्थक परियोजनाओं को छोड़ कर जनहित व पारिस्थितिकी के हित में योजनाएं बनाने पर जोर देना होगा।

खबर

मानवाधिकार संरक्षण संशोधन विधेयक 2018 को मिली कैबिनेट की मंजूरी

नई दिल्ली। 4 अप्रैल 2018

प्रधानमंत्री नरेन्द्र मोदी की अध्यक्षता में केन्द्रीय मंत्रिमंडल ने देश में मानव अधिकारों के बेहतर संरक्षण और संवर्धन के लिए मानव अधिकार संरक्षण (संशोधन) विधेयक, 2018 को अपनी स्वीकृति दे दी है। इस विधेयक में आयोग के मानित सदस्य के रूप में राष्ट्रीय बाल अधिकार संरक्षण आयोग को शामिल करने का प्रस्ताव है। इसमें विधेयक आयोग के गठन में एक महिला सदस्य को जोड़ने का प्रस्ताव है। विधेयक में राष्ट्रीय मानव अधिकार आयोग तथा राज्य मानव अधिकार आयोग के अध्यक्ष पद के लिए पात्रता और चयन के दायरे को बढ़ाने का प्रस्ताव है।

बताया गया कि विधेयक में केन्द्रशासित प्रदेशों में मानव अधिकारों के उल्लंघन के मामलों को देखने के लिए एक व्यवस्था बनाने का प्रस्ताव है। विधेयक में राष्ट्रीय मानव अधिकार आयोग तथा राज्य मानव अधिकार आयोग के अध्यक्ष और सदस्यों के कार्यकाल में संशोधन का प्रस्ताव है, ताकि इसे अन्य आयोगों के अध्यक्ष और सदस्यों के कार्यकाल के अनुरूप बनाया जा सके। प्रेस इंफॉर्मेशन ब्यूरो की ओर से जारी की गई प्रेस विज्ञप्ति के अनुसार इस संशोधन से भारत में मानव अधिकार संस्थानों को मजबूती मिलेगी और संस्थान अपने दायित्वों और भूमिकाओं तथा जिम्मेदारियों का कारगर निष्पादन कर सकेंगे। इतना ही नहीं, संशोधित अधिनियम से मानवाधिकार संस्थान जीवन, स्वतंत्रता, समानता तथा व्यक्ति के सम्मान से संबंधित अधिकारों को सुनिश्चित करने में सहमत वैश्विक मानकों का परिपालन करेंगे।

इसके जरिए मानव अधिकार संरक्षण अधिनियम 1993 में संशोधन से राष्ट्रीय मानव अधिकार आयोग (एनएचआरसी) तथा राज्य मानव अधिकार आयोग (एसएचआरसी) कारगर तरीके से मानव अधिकारों का संरक्षण और संवर्धन करने के लिए अपनी स्वायत्तता, स्वतंत्रता, बहुलवाद तथा व्यापक कार्यों से संबंधित पेरिस सिद्धांत का परिपालन करेंगे।

स्रोतः https://hindi.oneindia.com/news/india/cabinet-approves-draft-bill-for-better-protection-human-rights-451184.html

स्वच्छ ऊर्जा फण्ड की दुर्दशा

अजय झा

चित्र स्रोत: www.thehindubusinessline.com

2010-11 में भारत सरकार ने कोयले पर 50 रुपये/टन का सेस लगाया। ऐसा प्रयास दुनियाभर में जीवाश्म ईंधन की खपत में कमी लाने के लिए किया जा रहा है। इस सेस की आय से एक राष्ट्रीय स्वच्छ ऊर्जा फण्ड (National Clean Energy Fund) बनाया गया। फण्ड का उद्देश्य स्वच्छ व नवीकरणीय ऊर्जा पर शोध को प्रोत्साहित करना था। इस सेस को 2014-15 में 100 रुपये/टन, 2015-16 में 200 रुपये/टन और 2016-17 में 400 रुपये/टन कर दिया गया। 2016-17 में इस सेस का नाम बदलकर 'स्वच्छ ऊर्जा एवं पर्यावरण सेस' कर दिया गया और फण्ड का नाम बदलकर राष्ट्रीय स्च्छ ऊर्जा और पर्यावरण फण्ड कर दिया गया।

अब फण्ड से स्वच्छ ऊर्जा शोध के अलावा कई मदों पर जैसे कि ग्रीन ऊर्जा कॉरिडोर, नमामि गंगे, हरित भारत मिशन, जवाहरलाल नेहरू राष्ट्रीय सौर मिशन, सौर ऊर्जा चालित सिंचाई पंप, सौर ऊर्जा प्लांट इत्यादि को प्रोत्साहित किया जा रहा है। इस सेस से अब तक (2017) तक 86440 करोड़ रुपये जमा किया गया है जिसमें से 29645 करोड़ स्वच्छ ऊर्जा फण्ड को दिया गया है। फण्ड से अब तक 50 प्रतिशत पैसा ही विभिन्न प्रोजेक्ट्स पर खर्च किया गया है। हैरानी की बात यह है कि इसमें एक भी प्रोजेक्ट फण्ड के शुरुआती लक्ष्य स्वच्छ ऊर्जा के प्रोत्साहन के लिए शोध पर खर्च नहीं किया गया है। इससे भी हैरानी की बात है कि इस फण्ड का उपयोग कुछ मंत्रालयों (जैसे वन, पर्यावरण व जलवायु परिवर्तन, नई एवं नवीकरणीय ऊर्जा, बिजली, जल संसाधन, नदी विकास एवं गंगा पुनरोद्धार के रेग्युलर खर्चे व रेग्युलर परियोजनाओं के लिए किया जा रहा है जिनका शोध या स्वच्छ ऊर्जा शोध से दूर का रिश्ता भी नहीं है।

स्वच्छ ऊर्जा फण्ड के 24614 करोड़ में से 17,000 करोड़ नवीन और नवीकरणीय ऊर्जा मंत्रालय, 4,925 करोड़ जल संसाधन मंत्रालय, 220 करोड़ पेयजल व स्वच्छता मंत्रालय और 2,381 करोड़ वन, पर्यावरण मंत्रालय को अनुदान में दिया गया है। दरअसल MNRE का बजट लगातार कम हो रहा है, यह 2014-15 में 515 करोड़ से 2017-18 में घटकर 131 करोड़ हो गया। घटते हुए बजट की भरपाई स्वच्छ ऊर्जा फण्ड से की जा रही है जो 1977 करोड़ (2014-15) से बढ़कर 5341 करोड़ (2017-18) हो गया है। स्वच्छ ऊर्जा फण्ड अनुदान (MNRE) के पूरे

बजट का 97 प्रतिशत से भी ज्यादा है। 2017-18 के बजट में 1111 करोड़ वन एवं पर्यावरण मंत्रालय और 2250 करोड़ नमामि गंगे को भी दिया गया है।

गौरतलब है कि स्वच्छ ऊर्जा फण्ड पोषित 56 परियोजनाओं में से एक भी शोध से संबंधित नहीं है। सारी ऐसी परियोजनाओं के लिए धन इन मंत्रालयों के बजट से आना चाहिए था।

स्वच्छ ऊर्जा फण्ड को नई और नवीकरणीय ऊर्जा मंत्रालय, जल संसाधन, गंगा पुनरोद्धार या वन एवं पर्यावरण मंत्रालय के रेग्यूलर प्रोजेक्टर में लगाने से अच्छा यह होता कि इस कोष से राज्यों के जलवायु परिवर्तन एक्शन प्लान पर खर्च किया जाता। 33 राज्य और संघीय क्षेत्र एक्शन प्लान पर धन के अभाव में कोई प्रगति नहीं कर पाए हैं। राज्य एक्शन प्लान की कुछ गतिविधि जो विभिन्न विभागों द्वारा पहले से ही उनके एक्शन प्लान में थी, उसके अलावा उन्हें कहीं से भी आर्थिक संसाधन उपलब्ध नहीं है। सरकारी एस्टीमेट के हिसाब से 31 राज्यों के एक्शन प्लान को लागू करने का खर्च 11,33,000 करोड़ होगा। कुछ राज्य सरकारों की मानें तो राज्य एक्शन प्लान को आर्थिक मदद दी जा रही है। गुजरात के एक्शन प्लान को 25000 करोड़ दिया गया है, हालांकि सच्चाई यह है कि इसका 90 प्रतिशत सौर ऊर्जा को जा रहा है। उत्तराखण्ड सरकार ने भी घोषणा की थी कि सभी डिपार्टमेंट के खर्च का एक प्रतिशत एक्शन प्लान पर खर्च किया जाएगा, हालांकि यह घोषणा भी अभी तक सिर्फ कागज पर है। इसी तरह बिहार ने कहा कि उसने 68500 करोड़ रुपये जलवायु परिवर्तन संवेदनशील विभागों को दिया है, हालांकि इसमें अधिक बाढ़ नियंत्रण व खेती पर किए जाने वाले सामान्य खर्च ही हैं।

राज्यों के जलवायु परिवर्तन एक्शन प्लान के तहत संसाधन की आवश्यकता

राज्य	संसाधन की आवश्यकता (करोड़ रुपये)
हिमाचल प्रदेश	1,560
मध्य प्रदेश	4,653
उड़ीसा	17,000
पश्चिम बंगाल	30,000
हरियाणा	50,000
आंध्र प्रदेश	3,19,000
तमिलनाडु	4,02,000
झारखण्ड	3,176

जहां तक जलवायु परिवर्तन के लिए अनुकूलन पर होने वाले संसाधन का प्रश्न है, 2015 में शुरू किए गए अनुकूलन कोष (NAFCC) ने पिछले दो वर्षों में 27 राज्यों को एक-एक प्रोजेक्ट दिया है (10-25 करोड़)। हालांकि यह राज्यों की आवश्यकताओं को देखते हुए बहुत ही कम है।

इसके अलावा हरियाणा, पंजाब, राजस्थान और उत्तर प्रदेश को संयुक्त रूप से 100 करोड़ फसल कटने के बाद खेत में खड़ी पतवार (crop residue) का प्रबंधन करने को दिया गया है। अनुकूलन कोष से अभी तक 660 करोड़ की सहायता राज्यों को दी गई है। इसके अतिरिक्त अडेप्टेशन फण्ड बोर्ड ने भी तकरीबन एक करोड़ अमरीकी डॉलर की छः परियोजनाओं को स्वीकृति दी है। इसके अतिरिक्त हरित जलवायु कोष (GCF) ने उड़ीसा की एक परियोजना को 34 मिलियन अमरीकी डॉलर की स्वीकृति दी है।

आशय यह है कि राज्यों के एक्शन प्लान के लिए संसाधन देने की अभी भी कोई रूपरेखा तैयार नहीं हुई है और खासकर अनुकूलन के लिए इक्के-दुक्के परियोजनाऐं ही मिल रही हैं। इन परिस्थितियों में स्वच्छ ऊर्जा फण्ड का कुछ हिस्सा भी राज्यों के एक्शन प्लान में दिया जाना अच्छा रहता।

अगर आप अभी भी आश्चर्यचकित नहीं हुए तो यह जान लीजिए कि भारत सरकार के अनुसार भविष्य में इस फण्ड का उपयोग GST लागू करने से राज्यों के राजस्व में हुए घाटे को पूरा करने के लिए भी किया जाएगा। यह बड़े अचरज की बात है कि भारत जैसे बड़े देश में किसी भी मंत्रालय के पास स्वच्छ या नवीकरणीय ऊर्जा पर शोध

की कोई सोच नहीं है। इस फण्ड का अगर थोड़ा पैसा भी शोध पर लगाया जाता तो शायद फण्ड की परिकल्पना सार्थक होती।

ऊर्जा शोध में घटता निवेश पूरी दुनिया के लिए एक बड़ी चिंता है। आईईए के अनुसार 2017 में ऊर्जा शोध में आईईए सदस्य देशों में निवेश 16 बिलियन अमरीकी डॉलर था, जो 1978 से सर्वाधिक है लेकिन अगर मुद्रास्फीति को ध्यान में रखें तो ये लगातार चौथे साल ऊर्जा शोध निवेश में गिरावट है। चिंता का विषय यह भी है कि निजी क्षेत्र में भी इस पर निवेश कम हो रहा है। ज्यादा निवेश करने वाले देशों में जापान, अमरीका, यूरोप और चीन हैं। चीन में लगातर बढ़ता हुआ निवेश शायद जल्दी ही बाकी देशों को पीछे छोड़ देगा। जबकि भारत जैसे देश में स्वच्छ ऊर्जा की अपार संभावनाओं के बावजूद स्वच्छ ऊर्जा शोध में निवेश की गिरती हुई दशा चिंताजनक है। ■

ख़बर

मानवाधिकार के मामलों की जांच के लिए जल्द बनेगा अनुसंधान विंग

रांची। 26 मार्च 2018

राष्ट्रीय मानवाधिकार आयोग के निर्देश पर राज्य मानवाधिकार आयोग को मजबूत करने के लिए अनुसंधान विंग समेत इसी तरह की चार इकाईयों के गठन के लिए राज्य सरकार से पत्राचार किया गया है। राज्य सरकार ने संबंधित इकाईयों के गठन के लिए बजट के साथ प्रस्ताव मांगा है। एनएचआरसी ने इससे संबधित आदेश राज्य मानवाधिकार आयोग को दिया है। इन चारों डिवीजनों में लगभग 200 पदों का सृजन भी करना पड़ेगा।

स्रोतः https://www.bhaskar.com/jharkhand/ranchi/news/JHA-RAN-HMU-MAT-latest-ranchi-news-041504-1333606-NOR.html

घृणा अपराध और भीड़ तंत्र की चुनौती; स्वतंत्र कानूनी व्याख्या की जरुरत

दीनबंधु वत्स

चित्र स्रोतः द वायर

गांधी जी कहा करते थे अपराध से घृणा करो, अपराधी से नहीं। लेकिन हम घृणा के कारण ही अपराधी बनते जा रहे हैं। हम एक ऐसे समाज की ओर अग्रसर है जहां नफरत या घृणा अपराध तेजी से बढ़ रहा है। इससे सामाजिक ताना-बाना कमजोर हो रहा है और आपसी सौहार्द्र भी प्रभावित हो रहा है।

क्या है घृणा अपराध

जब कोई आपराधिक कृत्य समूह विशेष के सदस्य के प्रति नफरत या घृणा के कारण किया जाता है तो उसे घृणा अपराध कहते हैं। घृणा अपराध के दो पक्ष हैं- पहला, कोई भी कृत्य आपराधिक कानून के अंतर्गत अपराध माना जाए, और दूसरा, वह अपराध समूह विशेष के प्रति पूर्वाग्रह से प्रेरित हो। पूर्वाग्रह से प्रेरित होने से अभिप्राय समूह विशेष के प्रति पूर्वकल्पित नकारात्मक राय, रूढ़िवादी धारणा, असहिष्णुता या नफरत रखना है। समूह की पहचान सामान्य विशेषता, जैसे वंश, जातीयता, भाषा, धर्म, राष्ट्रीयता, यौन अभिविन्यास, लिंग या किसी अन्य मौलिक विशेषता के आधार पर की जाती है।

घृणा अपराधों में धमकी, संपत्ति की क्षति, हमला, हत्या या पूर्वाग्रह के साथ कोई अन्य आपराधिक कृत्य शामिल हो सकते हैं, जैसे- मौखिक अपमान, अपमानजनक भित्तिचित्र या पत्र आदि। घृणा अपराध केवल विशिष्ट समूहों के व्यक्तियों को

प्रभावित नहीं करते हैं बल्कि समूह विशेष के प्रतीकों या चिन्हों पर भी हमला घृणा अपराध के अंतर्गत आते हैं। मसलन खास सामुदायिक केंद्रों या पूजा स्थलों पर हमला। इस प्रकार घृणा अपराध का व्यापक आयाम है जिसमें वो तमाम आपराधिक कृत्य शामिल हैं जो नफरत के आधार पर किये जाते हों। घृणा अपराध केवल प्रत्यक्ष लक्ष्य को नहीं बल्कि समूह विशेष के हर सदस्य को प्रभावित करता है। पूर्वाग्रह से प्रेरित अपराध एक लक्षित समूह के सदस्यों के बीच असंतोष की एक व्यापक लहर पैदा कर सकता है। हिंसक घृणा अपराध जंगल में लगी आग की तरह फैलता है। यह पूरे समुदाय में आतंक और घृणा का भाव पैदा करता करता है। मनोवैज्ञानिक प्रभावों के अलावा यह न केवल पीड़ित व्यक्ति बल्कि समूह के अन्य सदस्यों में भी बदले की भावना तेजी से पैदा कर सकता है। यही कारण है कि घृणा अपराध सामान्य अपराधों से ज्यादा खतरनाक और दूरगामी प्रभाव वाला है।

वैसे तो घृणा अपराध का इतिहास काफी पुराना है लेकिन 80 के दशक में इस शब्द का चलन अमरीका में तेजी से होने लगा। आज भारत सहित दुनिया के कई देशों में घृणा अपराध में तेजी से इजाफा हुआ है। भारत में घृणा अपराध का कोई विस्तृत आंकड़ा आधिकारिक रूप से मौजूद नहीं है। भारत के क्राइम रिपोर्टिंग में अमरीका और ब्रिटेन की तरह हेट क्राइम की कोई अलग श्रेणी नहीं है। राष्ट्रीय अपराध रिकॉर्ड ब्यूरो (एनसीआरबी) घृणा अपराध की अलग से कोई जानकारी नहीं देता है। हालांकि एनसीआरबी धर्म, जाति जन्म स्थान आदि (आईपीसी की धारा 153क और 153ख) के आधार पर विभिन्न समूहों के बीच शत्रुता को बढ़ावा देने वाले अपराधों से सम्बंधित आंकड़ों का रख-रखाव करता है। इसके विपरीत अमरीका का फेडरल ब्यूरो ऑफ इन्वेस्टीगेशन (एफबीआई) हेट क्राइम के आंकड़े 1992 से ही सार्वजानिक रूप से प्रकाशित करता है।

भारत में घृणा अपराध

भारत में घृणा अपराध का स्तर अज्ञात है, क्योंकि कानून सामान्यतः हेट क्राइम को विशेष अपराध के रूप में नहीं पहचानता है। पुलिस भी घृणा अपराध को सामान्य अपराध की तरह ही देखती है। कई संगठनों ने हेट क्राइम के आंकड़ों को इकट्ठा करने का काम किया है। एमनेस्टी इंटरनेशनल की 'हाल्ट द हेट' वेबसाइट ने साल 2017 में घृणा अपराध की 202 घटनाओं को सूचीबद्ध किया है जिसमें कथित रूप से दलितों के विरुद्ध 141 घटनाएं तथा मुस्लिमों के विरुद्ध 44 घटनाओं का जिक्र किया है। 69 घटनाएं ऐसी हैं जिनमें कम से कम 146 लोग मारे गए थे। 35 ऐसी घटनाएं देखी गई थीं, जिसमें महिलाओं या ट्रांसजेंडर व्यक्तियों के विरुद्ध लैंगिक हिंसा हुई थी। साल 2016 में 237 कथित घृणा अपराध दर्ज किए गए थे। उत्तर प्रदेश, हरियाणा, तमिलनाडु, कर्नाटक और गुजरात में सबसे ज्यादा घटनाएं दर्ज की गईं। (http://haltthehate-amnesty-org)

एनसीआरबी के मुताबिक विभिन्न समूहों के बीच शत्रुता को बढ़ावा देने वाले अपराधों में विगत तीन वर्षों में 41 प्रतिशत की वृद्धि दर्ज की गई है। वर्ष 2014 में ऐसे 336 मामले दर्ज किये गए जो कि 2015 में बढ़ कर 424 और 2016 में 475 हो गए। उत्तर प्रदेश में वर्ष 2014 में ऐसे 26 मामले दर्ज किये गए थे जो 2016 में बढ़ कर 116 हो गए, पश्चिम बंगाल में 2014 में 20 मामले दर्ज किये गए जो कि 2016 में बढ़ कर 54 हो गए। वहीं उत्तराखंड में भी इस दौरान आपसी शत्रुता के मामलों में पांच गुना से अधिक वृद्धि हुई। बिहार में 2014 में आपसी शत्रुता का कोई मामला दर्ज नहीं हुआ था जबकि 2016 में ऐसे 8 मामले दर्ज किये गए।

विगत कुछ वर्षों में गाय के नाम पर लोगों को हत्याएं हुई हैं। भीड़ ने लोगों की हत्या कर दी। इंडिया स्पेंड वेबसाइट के मुताबिक 2010 से 2017 के बीच में गाय से सम्बंधित हेट क्राइम की 78 घटनाएं हुईं, जिसमें 29 लोग मारे गए। इन 29 लोगों में 25 मुस्लिम थे. इस वेबसाइट के अनुसार इस तरह के मामलों की 97 प्रतिशत घटनाएं साल 2014 से 2017 के बीच हुईं जबकि 2010 और 2011 में ऐसी कोई घटना दर्ज नहीं की गई। हालांकि 2012 और 2013 में एक-एक घटना प्रकाश में आई थी।

दुनिया नफरत की गिरफ्त में

दुनिया के दूसरे देशों में भी हेट क्राइम तेजी से बढ़ रहा है। अमरीका, फ्रांस, ब्रिटेन जैसे तमाम विकसित दशों में हेट क्राइम की घटनाएं बढ़ रही हैं। एफबीआई हर साल हेट क्राइम के आंकड़े जारी करती है। साल 2016 में अमरीका में हेट क्राइम के 6,121 मामले दर्ज किये गए जो कि 2014 से छः प्रतिशत अधिक था। इनमें 58 प्रतिशत मामले नस्ल, वंश या जाति से सम्बंधित थे, जबकि 21 प्रतिशत धार्मिक हिंसा और 29 प्रतिशत लैंगिक हिंसा से सम्बंधित मामले थे। धार्मिक हिंसा के सबसे अधिक शिकार यहूदी और मुसलमान रहे (https://ucr-fbi-gov/hate&crime/2016)। ब्रिटेन का गृह विभाग भी साल 2011-12 से हेट क्राइम के आंकड़े हर साल जारी करता

है। ब्रिटेन में साल 2016-17 में हेट क्राइम के 80,393 मामले दर्ज किये गए जो कि 2015-16 से 29 प्रतिशत अधिक है। इंग्लैंड और वेल्स में सबसे अधिक हेट क्राइम की घटनाएं हुईं। इनमें सबसे अधिक 78 प्रतिशत मामले नस्ल से सम्बंधित थे। यहां विकलांगों, ट्रांसजेंडरों के साथ-साथ समलैंगिकों पर भी हमले हुए हैं (http://www-bbc-com/news/uk&41648865)। फ्रांस भी हेट क्राइम के आंकड़े जारी करता है। यहाँ हेट क्राइम के 2016 में 1835 मामले दर्ज हुए थे जबकि 2015 में 1790 मामले ही दर्ज किये गए थे (http://hatecrime-osce-org/france)।

पाकिस्तान, बांग्लादेश, श्रीलंका सहित भारत के तमाम पड़ोसी देशों में घृणा अपराध में मामले बढ़ रहे हैं। खासकर धार्मिक अल्प संख्यकों पर हमले तेज हुए हैं। हाल ही में श्रीलंका में मुस्लिमों पर हुए हमले के बाद आपातकाल घोषित कर दिया गया था। म्यांमार में रोहिंग्या मुसलमानों का नस्लीय नरसंहार का दौर अभी भी जारी है। पिछले साल अगस्त में अराकान में हुई हिंसा के बाद एक महीने के अन्दर 25 अगस्त 2017 से 25 सितम्बर 2017 के बीच 9000 से अधिक रोहिंग्या मुसलमान मारे गए और 7 लाख से अधिक लोग पलायन कर गए (http://www-msf-org)। ह्यूमन राइट्स वॉच की सैटेलाइट तस्वीरों के विश्लेषण से सामने आया कि अगस्त 2017 के बाद एक महीने में म्यांमार में कम से कम 288 गांव जला दिए गए।

घृणा अपराध और भारतीय कानून

भारतीय दंड संहिता घृणा अपराध की कोई स्वतंत्र परिभाषा नहीं देती और न ही इससे निपटने का कोई अलग से कानून है। घृणा अपराध को सामान्य अपराधों की श्रेणी में रखते हैं और फिर उसी तरह निपटते भी हैं। हालांकि भारतीय दंड संहिता की धारा 295 से 298 किसी वर्ग के धर्म का अपमान करने, धार्मिक भावना आहत करने आदि को प्रतिबंधित करता है और धारा 153 धार्मिक आधार पर नफरत फैलाने को निषेध करती है। गौरतलब है कि इन सभी धाराओं में सात साल से कम की सजा है जिसमें आसानी से जमानत मिल जाती है। इन धाराओं के अतिरिक्त अत्याचार निवारण अधिनियम और नागरिक सुरक्षा अधिकार जैसे कानून हैं जो कि घृणा अपराध से निपटने के लिए इस्तेमाल किया जा सकता है।

घृणा अपराध और भीड़तंत्र की इस चुनौती का सामना करने के लिए भारत में कोई स्वतंत्र कानून नहीं है। लोकसभा में 25 अगस्त 2017 को एक तारांकित प्रश्न के जवाब में गृह राज्य मंत्री हंसराज अहीर ने कहा था कि फिलहाल भीड़तंत्र से निपटने के लिए कोई अलग कानून बनाने का प्रस्ताव नहीं है। घृणा अपराध असहिष्णुता का सबसे गंभीर प्रदर्शन है। भारत में जिस तरह से यह अपराध बढ़ रहा है, सामाजिक और राजनैतिक प्रयासों के साथ-साथ कानूनी प्रयास करने की भी जरूरत है। हमें घृणा अपराध को कानूनी रूप से परिभाषित करने और उसकी आधिकारिक रिपोर्टिंग करने की जरूरत है। तदनुसार कानूनी प्रावधान लाने होंगे। पुलिस कई बार इस तरह के मामलों में धार्मिक नफरत और आपसी शत्रुता की धारा नहीं लगाती है, जैसा कि मोहम्मद अखलाक की हत्या के केस में हुआ था। इसलिए घृणा अपराध की स्वतंत्र कानूनी व्याख्या आवश्यक है।

कैदियों के भी मानवाधिकार, उन्हें जानवरों की तरह जेल में न रखें: सुप्रीम कोर्ट

क्विंट हिंदी। 27 मार्च 2018

सुप्रीम कोर्ट ने देश की जेलों में क्षमता से ज्यादा कैदी रखे जाने पर कड़ी आपत्ति जताई है। उन्होंने कहा कि कैदियों के भी मानवाधिकार हैं, उन्हें जानवरों की तरह जेल में नहीं रखा जा सकता। सुप्रीम कोर्ट ने कहा कि जेल में ऐसे कई कैदी हैं, जिन्हें जमानत मिल गई है, लेकिन जमानत राशि नहीं भरने की वजह से उन्हें रिहा नहीं किया गया है। वहीं कुछ लोग मामूली अपराधों के लिए जेल में हैं, जिन्हें काफी समय पहले जमानत मिल जानी चाहिए थी।

जस्टिस मदन बी लोकुर और जस्टिस दीपक गुप्ता की पीठ ने कहा, "यह दुर्भाग्यपूर्ण है कि जेलों में काफी भीड़ है। कैदियों के भी मानवाधिकार हैं और उन्हें जानवरों की तरह जेल में नहीं रखा जा सकता।" पीठ ने कहा, "जेल सुधारों के बारे में बात करने का क्या मतलब है, जब हम उन्हें जेल में नहीं रख सकते। अगर आप उन्हें ठीक से नहीं रख सकते हैं, तो हमें उन्हें रिहा कर देना चाहिए।"

पीठ ने कहा कि सुप्रीम कोर्ट 30-40 साल पहले कह चुकी है कि कैदियों के भी मानवाधिकार हैं। कोर्ट ने राष्ट्रीय विधिक सेवा प्राधिकार (NALSA) से 21 फरवरी को कहा था कि वह जेलों में काफी भीड़ के मुद्दे की पड़ताल करे और उसके सामने जेलों में आबादी के बारे में संख्या रखे, जहां पिछले साल 31 दिसंबर तक 150 फीसदी से अधिक लोगों को रखा गया था। सुप्रीम कोर्ट देशभर की 1382 जेलों की अमानवीय स्थिति के बारे में याचिका पर सुनवाई कर रही थी।

पैरवी गतिविधियां

उत्तर प्रदेश में विधिक सेवा की स्थिति पर परिचर्चा

उत्तर प्रदेश में विधिक सेवा की स्थिति पर एक परिचर्चा का आयोजन 20 जनवरी 2018 को लखनऊ में किया गया, जिसमें प्रदेश के विभिन्न भागों से आए सामाजिक संगठनो के सदस्य, कानून के जानकर, विधिक सेवा प्राधिकरण के सदस्य सहित कई लोगों ने भाग लिया। परिचर्चा में मुख्य रूप से प्रदेश में विधिक सेवा की स्थिति और मुफ्त कानूनी सहायता प्राप्त करने के अधिकार विषय पर चर्चा की गई। प्रदेश में लोगों तक विधिक सेवा की पहुंच सही अर्थों में नहीं हो पाने पर वक्ताओं ने चिंता व्यक की, साथ ही प्रदेश के सामाजिक संगठन इस विषय पर किस तरह से अपना योगदान दे सकते हैं, इस पर भी प्रतीभागियों ने अपनी राय जाहिर की। चर्चा का आयोजन पैरवी ने लखनऊ की संस्था अमलतास के साथ मिल कर किया था।

जलवायु परिवर्तन और गांवों की माइक्रो प्लानिंग: कार्यशाला

पैरवी, बियॉण्ड कॉपेनहेगन व सिकोईडिकॉन द्वारा जलवायु परिवर्तन के प्रभावों से निपटने और गांव के स्तर पर माइक्रो प्लानिंग करने की क्षमता का विकास करने के उद्देश्य से बिलासपुर (छत्तीसगढ़) में 29 से 30 जनवरी 2018 तक एक कार्यशाला का आयोजन किया गया। इसमें छत्तीसगढ़ के साथ ही राजस्थान, उत्तराखण्ड, उत्तर प्रदेश, महाराष्ट्र व मध्य प्रदेश राज्यों से प्रतिभागी शामिल हुए। दो दिन तक चली इस कार्यशाला में एकीकृत माइक्रो प्लानिंग और समस्या निवारण के लिए की जाने वाली मइक्रोप्लानिंग पर विस्तार से चर्चा हुई। माइक्रो प्लानिंग के लिए जरूरी विभिन्न महत्त्वपूर्ण काम, जैसे कि रिसोर्स मैपिंग, जन-भागीदारी, योजना और कार्यान्वयन, वल्नेरबिलिटी असेसमेंट आदि पर कार्यशाला में विस्तार से चर्चा हुई। कार्यशाला में आए प्रतिभागियों ने सिमरिया गांव में लोगों के साथ माइक्रो प्लानिंग से सम्बंधित सैद्धांतिक ज्ञान को प्रयोग के तौर पर भी लागू किया।

डी.के. बसु दिशा-निर्देश और पुलिस प्रशासन की उदासीनता पर प्रेस वार्ता

डी.के. बसु दिशा-निर्देश के प्रति पुलिस प्रशासन की उदासीनता को उजागर करने, इसके बारे में लोगों को जागरूक करने और शासन-पुलिस महकमा के बीच इसकी जन-वकालत करने के उद्देश्य से बार एसोसिएशन डेहरी, बिहार में 24 फरवरी 2018 को एक प्रेस वार्ता का आयोजन किया गया। उच्चतम न्यायालय ने डी.के. बसु बनाम पश्चिम बंगाल मामले में सुनवाई करते हुए 1996 में गिरफ्तारी या हिरासत में लेने के लिए 11 दिशा-निर्देश जारी किये थे। उच्चतम न्यायालय ने यह दिशा-निर्देश

पुलिस हिरासत में यातना और मौत के मामलों में जारी किये थे। इन दिशा-निर्देशों के प्रति पुलिस प्रशासन उदासीन रहती है और इसका अनुपालन नहीं हो पाता है। हर थाने में इन दिशा-निर्देशों को अंकित करना है जिससे कि यह लोगों के बीच दृष्टिगत हो सकें, लेकिन प्रदेश के अधिकांश थानों में यह दिशा-निर्देश अंकित नहीं हैं। पुलिस इसके प्रति संवेदनशील नहीं है। इस प्रेस वार्ता का आयोजन पैरवी के सहयोग से बंदी अधिकार आन्दोलन ने किया था।

बीड़ी श्रमिकों के सुरक्षित वैकल्पिक रोजगार पर कार्यशाला

बीड़ी श्रमिकों के मानव अधिकारों के रक्षा, उनकी सामाजिक-आर्थिक स्थिति में बेहतरी, और उनके लिए सुरक्षित वैकल्पिक रोजगार की संभावनाओ पर बीड़ी श्रमिकों के साथ कार्यशाला का आयोजन बिहार के जमुई और बांका जिले में क्रमशः 26 फरवरी 2018 और 8 मार्च 2018 को किया गया। इन कार्यशालाओं में 100 से अधिक बीड़ी श्रमिकों ने भाग लिया जिसमें अधिकांश अल्पसंख्यक और पिछड़े वर्ग की महिलाएं शामिल थीं। कार्यशाला में बीड़ी श्रमिकों ने पहचान-पत्र नहीं होने के कारण होने वाली समस्याओं से अवगत कराया। साथ ही बीड़ी बनाने के काम में लगे रहने के कारण स्वास्थ्य पर पड़ने वाले प्रतिकूल प्रभावों पर चर्चा हुई। इस दौरान बीड़ी श्रमिकों ने वैकल्पिक रोजगार पर जोर दिया और इसके विकल्प के रूप में किस तरह के रोजगार करना संभव हो सकता है, इस पर भी प्रकाश डाला गया। इन कार्यशालाओं का आयोजन पैरवी के सहयोग से लोक विकास संस्थान, जमुई ने किया था।

हिमालय में नदियों व जल-विद्युत परियोजनाओं पर दक्षिण एशियाई कांफ्रेंस

मार्च 2018 में पैरवी व बियॉण्ड कॉपेनहेगन ने ऋषिकेश में तीन दिवसीय कांफ्रेंस का आयोजन किया, जिसमें उत्तर और उत्तर-पूर्वी हिमालयी राज्यों के साथ-साथ नेपाल से भी लोग सम्मिलित हुए। इस कांफ्रेस का मुख्य उद्देश्य हिमालय की नदियों पर बन रहे बड़े बांधों से हो रहे सामाजिक व पर्यावरणीय प्रभावों पर चर्चा, स्थानीय लोगों के संघर्षों पर चर्चा व सामूहिक कार्यनीति का गठन करना था। बियॉण्ड कोपेनहेगेन से सौम्या दत्ता ने बताया कि किस तरह पैरिस समझौते के अंतर्गत की गई प्रतिबद्धताओं को पूरा करने के लिए भारत सरकार जल विद्युत को बढ़ावा दे रही है और हिमालयी राज्यों में ज्यादा जल विद्युत क्षमता होने के कारण वहां कई बड़ी परियोजनाऐं प्रस्तावित हैं। नर्मदा बचाओ आन्दोलन की संस्थापक मेधा पाटकर ने यह चिंता व्यक्त की कि बांधों से जुड़े मुद्दों के लिए किस तरह जन समर्थन को बढ़ाया जाए, साथ ही उन्होंने कहा कि भारत-नेपाल-भूटान को साथ मिलकर ऐसी परियोजनाओं का सामना करना होगा। अंतरराष्ट्रीय नदियों पर बने बांधों से जुड़े मुद्दे पर सरकारें कभी भी प्रभावित समुदायों को संघर्ष समाधान में शामिल नहीं करतीं।

कांफ्रेंस में यह बात भी निकल कर आई कि ऐसे भी बांध हैं जिनके लिए वन व पर्यावरणीय मंजूरी नहीं ली गई। नेपाल से आये साथियों ने बताया कि महाकाली नदी पर बनने वाले पंचेश्वर बांध से नेपाल में करीब 103 गांव प्रभावित होंगे। कांफ्रेंस में वित्तीय संस्थाओं की भूमिका पर भी चर्चा की गई। बड़े पैमाने पर विस्थापन और उससे जुड़े दूसरे मुद्दों को जानते हुए भी विश्व बैंक जैसी अंतरराष्ट्रीय वित्तीय संस्थाएं भी भारत और नेपाल जैसे देशो में बांधों को वित्तीय सहायता देती हैं। प्रतिभागियों ने यह राय जताई कि हिमालयी नदियों के सब मुद्दों का सामना करने, नदियों को बांधों से मुक्त करने व लोगों के अधिकारों के संघर्षों को आगे बढ़ाने के लिए एक ऐसा मंच बनाया जाए जहां कानूनी व दूसरी जानकारी साझा हो और ऐसे लोगों को चिन्हित किया जाए जो जन-समर्थन एकत्रित करते हुए बांधों से जुड़े लोगों के संघर्षों के बारे में बताएं।

''मैं नहीं चाहता कि मेरे घर के सभी दरवाजे और खिड़कियाँ बंद हों। मैं एक ऐसा घर चाहता हूँ जिसकी सभी खिड़कियाँ और दरवाजे खुले हों, जिसमें हर भूमि और राष्ट्र की सांस्कृतिक पवन होकर गुजरे।''

- महात्मा गांधी

प्रति,

_____

_____

_____

_____

बुक पोस्ट

पैरवी, ई-46, अपर ग्राउण्ड फ्लोर, लाजपत नगर-3, नई दिल्ली-110024 द्वारा सीमित प्रसार के लिए प्रकाशित
फोनः 011-29841266, 65151897 | ईमेलः pairvidelhi1@gmail.com, info@pairvi.org | वैबसाइटः www.pairvi.org